IARJSET

ISSN (O) 2393-8021, ISSN (P) 2394-1588

International Advanced Research Journal in Science, Engineering and Technology

Impact Factor 8.066 ⁜ Peer-reviewed & Refereed journal ⁜ Vol. 13, Issue 7, July 2026

DOI: 10.17148/IARJSET.2026.13725

संत रैदास के जीवन मूल्यों की प्रासंगिकता

कृति कुमारी

शोधार्थी (हिंदी विभाग), डॉ. हरिसिंह गौर केंद्रीय विश्वविद्यालय, सागर (मध्य प्रदेश)

सारांश: भारत के इतिहास में मध्यकालीन काल धार्मिक संघर्षों का युग था, और सांस्कृतिक संकटों से गुजर रहे खंडित समाज का पुनर्गठन या सुधार केवल धर्म की भाषा के माध्यम से ही किया जा सकता था। इसलिए सभी सामाजिक सुधारकों या महान व्यक्तित्वों को समाज द्वारा राजनीतिक विचारकों के रूप में नहीं, बल्कि केवल धार्मिक भक्तों, धार्मिक शिक्षकों या संतों के रूप में ही स्वीकार किया जा सकता था। संत शिरोमणि गुरु रविदास भी उनमें से एक थे। प्रारंभ में वे क्षत्रिय चंवर वंश से जुड़े चमार समुदाय के संत थे, और यहां तक कि ब्राह्मण भी उनके घर से भोजन और दान स्वीकार करते थे, लेकिन जब सिकंदर लोदी ने इस्लाम स्वीकार करने से इनकार करने पर उनका अपमान किया और उन्हें “चमार” कहकर चमड़े का काम करने के लिए मजबूर किया, तब लोगों ने उन्हें “अछूत” कहना शुरू कर दिया। इसी प्रकार के उत्पीड़न, प्रताड़ना, शोषण और विनाश की घटनाएं कई अन्य स्वाभिमानी समुदायों के साथ भी हुईं, और वे सभी समुदाय जिन्हें विदेशी मुस्लिम शासकों द्वारा जबरन कुचल दिया गया, “दलित” कहलाने लगे।

मुख्य शब्द: अछूत, उत्पीड़न, प्रताड़ना, शोषण और विनाश आदि।

शोध प्रविधि

इस शोध पत्र में प्राथमिक एवं द्वितीय स्रोतों के माध्यम से अध्ययन किया गया है। प्राथमिक ग्रन्थों के रूप में साक्षात्कार द्वितीयक के रूप में पुस्तक, पत्र-पत्रिकाओं के माध्यम से अध्ययन किया गया है।

उद्देश्य

- सामाजिक समस्याओं के निदान का प्रयास करना।
- सामाजिक असमानता को खत्म करना।
- मानवीय मूल्यांे की दिनों-दिन हो रहे ह्रास्य का समाधान ढूढ़ना।

समस्या

दलित शब्द का अर्थ केवल अछूत जातियों से नहीं जोड़ा जाना चाहिए, क्योंकि सभी अछूत दलित हो सकते हैं, जबकि दलित स्पृश्य भी हो सकते हैं। वे लोग जिन्हें मुस्लिम आक्रमणकारी शासकों द्वारा चमड़े के काम या मानव मल ढोने जैसे अपवित्र व्यवसायों में जबरन लगाया गया, वे इन अपवित्र व्यवसायों के कारण अछूत बन गए। यहाँ दलित उन लोगों को कहा गया है जिनकी पूरी संपत्ति आक्रमणकारियों द्वारा छीन ली गई और जिन्हें भटकता हुआ जीवन जीने के लिए मजबूर किया गया। विदेशी मुस्लिम शासकों ने सबसे पहले उन लोगों को निर्धन

 This work is licensed under a Creative Commons Attribution 4.0 International License

IARJSET ISSN (O) 2393-8021, ISSN (P) 2394-1588
International Advanced Research Journal in Science, Engineering and Technology
Impact Factor 8.066 ⁜ Peer-reviewed & Refereed journal ⁜ Vol. 13, Issue 7, July 2026
DOI: 10.17148/IARJSET.2026.13725

बनाया जिन्होंने इस्लाम स्वीकार नहीं किया और उन्हें भुखमरी की स्थिति तक पहुंचा दिया। धन और संपत्ति के साथ-साथ उनका सामाजिक सम्मान और प्रतिष्ठा भी छीन ली गई, जिससे वे दलित बन गए। लोगों को निर्धन बनाने के पीछे एक अन्य उद्देश्य यह भी था कि यदि हिंदू धन और भोजन के साथ समृद्ध रहते, तो वे अपनी सैन्य शक्ति बढ़ा सकते थे और उनके विरुद्ध विद्रोह भी कर सकते थे; इसलिए हिंदुओं को भी गरीब बना दिया गया। इस प्रकार स्पष्ट है कि दलित बनाने के लिए यही प्रक्रिया अपनाई गई। लोगों को निर्धन बनाया गया, जिससे आक्रमणकारियों के दोनों उद्देश्य पूरे हो गए।

समाधान

दलित हिंदुओं की संख्या स्वाभाविक रूप से बढ़ गई क्योंकि एक ही समय में बहुत बड़ी संख्या में लोग आर्थिक रूप से निर्धन बना दिए गए। दलित स्थिति प्राप्त करने और भटकता जीवन जीने के लिए मजबूर होने के कारण उनके पास आजीविका का कोई साधन नहीं था, और सुल्तानों के क्रोध के भय से कोई भी उन्हें अपने साथ रखने को तैयार नहीं था। कोई भी उन्हें आर्थिक सहायता तक नहीं दे सकता था। ऐसी दलित जातियों की दयनीय आर्थिक स्थिति, जिन्हें जबरन इस स्थिति में धकेला गया था, के कारण उनकी सामाजिक स्थिति भी दयनीय हो गई, और उनके आर्थिक पतन के साथ-साथ उनका सामाजिक पतन भी हुआ। उन दलितों में जो अपवित्र और गंदे व्यवसायों में लगे थे, उन्हें "अछूत" माना जाने लगा, जिससे उनकी सामाजिक स्थिति और भी चिंताजनक हो गई। सबसे बड़ा सामाजिक पतन उन लोगों का हुआ जो चमड़े के काम और मानव मल ढोने जैसे अपवित्र व्यवसायों में लगे और स्थायी रूप से अछूत बना दिए गए। आर्थिक शक्ति के आधार पर वैश्य वर्ण से उत्पन्न जातियां सामाजिक सामंजस्य बनाए रखने में सफल रहीं, जबकि गरीब दलित जातियों के साथ उनके अपवित्र व्यवसायों और अछूत स्थिति के कारण संबंध बनाए रखने के लिए तैयार नहीं था। उन पर अनेक प्रतिबंध लगाए गए। धार्मिक अनुष्ठानों और सामाजिक समारोहों से वंचित होने के कारण वे धीरे-धीरे समाज की मुख्यधारा से अलग होते गए, और यह भ्रांति फैल गई कि दलित समाज पहले से ही सामाजिक पतन का शिकार था। दलित जातियां, यद्यपि वे प्राचीन शूद्र नहीं थीं, धीरे-धीरे शूद्रों के लिए बनाए गए नियमों और कानूनों के अंतर्गत आ गईं। दलितों ने तथाकथित उच्च जाति के हिंदुओं का बचा हुआ भोजन स्वीकार किया, लेकिन उन्होंने मुसलमानों द्वारा छुआ हुआ पानी तक स्वीकार नहीं किया।

हिंदू धर्म की रक्षा करने के बाद संत रविदास इतने प्रसन्न थे कि उन्हें इस बात की चिंता नहीं थी कि इसी कारण उन्हें दलित और अछूत भी बना दिया गया था। उनकी संपत्ति पहले ही छीन ली गई थी, उन्हें चमड़े के काम के लिए मजबूर किया गया था, और इस अपवित्र व्यवसाय के कारण उन्हें अछूत बना दिया गया था। यहां तक कि वे लोग जो जानते थे कि वे क्षत्रिय चंवर वंश से संबंधित थे, वे भी संत शिरोमणि गुरु रविदास और उनकी जाति को अपवित्र और अछूत मानने लगे। उनके साथ भेदभाव किया गया, और हिंदू समाज के पारंपरिक तथा अज्ञानी लोगों ने उनसे दूरी बना ली। फिर भी, उन परिस्थितियों में भी उन्होंने इस्लाम स्वीकार नहीं किया और दलित या अछूत माने जाने के बावजूद अपने धर्म पर गर्व महसूस करते रहे। दलित समाज की कई स्वाभिमानी जातियां निर्धन बना दी गईं और उन्हें भटकता जीवन जीने के लिए मजबूर किया गया, लेकिन उनका धर्म (हिंदू

 This work is licensed under a Creative Commons Attribution 4.0 International License

IARJSET ISSN (O) 2393-8021, ISSN (P) 2394-1588

International Advanced Research Journal in Science, Engineering and Technology
Impact Factor 8.066 ⁜ Peer-reviewed & Refereed journal ⁜ Vol. 13, Issue 7, July 2026
DOI: 10.17148/IARJSET.2026.13725

धर्म) सुरक्षित रहा और उनकी जाति भी बनी रही, भले ही उन्हें जबरन किसी अपवित्र या गंदे व्यवसाय में नहीं लगाया गया था। इसी प्रकार इन दलितों ने उन दलितों का बहिष्कार किया जिन्हें इस्लाम स्वीकार न करने के कारण जबरन अपवित्र और गंदे व्यवसायों में लगाया गया था। इस व्यवस्था के कारण समाज और अधिक विकृत हो गया। दलितों में अनेक जातियां, उपजातियां और उपाधियां विकसित हो गईं। सामूहिक रूप से उनकी संख्या बहुत बड़ी थी, लेकिन जाति के आधार पर अलग-अलग गिनने पर प्रत्येक समूह की जनसंख्या छोटी थी। छोटी संख्या के कारण वे शक्तिशाली नहीं थे, और दलित नाम के अंतर्गत संगठित न होने के कारण भी कमजोर थे। फिर भी, उन सभी लोगों के बीच संत शिरोमणि गुरु रविदास की आध्यात्मिक शक्ति इतनी प्रबल थी कि वे उनके बीच एक शक्तिशाली हिंदू रक्षक बन गए। संत रविदास हिंदू धर्म के सम्मानित अनुयायी थे। वे किसी भी सुख या सुविधा के लिए धर्म परिवर्तन स्वीकार करने के पक्ष में नहीं थे; बल्कि हिंदू धर्म में बने रहने के लिए वे अपनी सारी संपत्ति और संसाधनों का त्याग करने को तैयार थे। संत रविदास का विश्वास था कि धन खोने के बाद उसे पुनः प्राप्त किया जा सकता है, लेकिन धर्म खोने के बाद कुछ भी शेष नहीं रहता। इसलिए संत रविदास ने कहा कि यदि आक्रमणकारी शासक आपका धन और संपत्ति छीन लें और आपको स्थान-स्थान पर भटकने तथा भूख सहने के लिए मजबूर करें, तब भी आपको कभी इस्लाम स्वीकार नहीं करना चाहिए। उन्होंने यह भी कहा कि यदि किसी व्यक्ति को अपवित्र व्यवसायों में धकेल दिया जाए और लाखों प्रयासों के बाद भी अपमानित किया जाए, तब भी इसका उस व्यक्ति पर कोई प्रभाव नहीं पड़ेगा जो अपने धर्म को बदलने से दृढ़तापूर्वक इनकार करता है। संत शिरोमणि गुरु रविदास ने अपने स्वयं के उदाहरण द्वारा दलितों और अछूतों जैसी सभी जातियों को उनके स्वाभिमानी और गौरवशाली अतीत की याद दिलाई और कहा कि ऐसे सभी लोगों को उनकी तरह अपने कर्तव्यों में लगे रहना चाहिए। यदि किसी को व्यवसाय के आधार पर अपमानजनक सामाजिक स्थिति प्राप्त होती है, तो उसे इसे संक्रमणकालीन अवधि की मजबूरी समझना चाहिए और अपने धर्म के प्रति अपनी प्रतिबद्धता पर गर्व करना चाहिए। यदि अज्ञानता और गरीबी एक-दूसरे का पीछा करती रहें, या मृत्यु भी आगे और पीछे चलती रहे, तब भी व्यक्ति को जबरन बनाई गई दलित स्थिति के कारण स्वयं से घृणा नहीं करनी चाहिए और न ही स्वयं को निम्न समझना चाहिए। क्योंकि जाति या व्यवसाय किसी को छोटा या बड़ा नहीं बनाते; बल्कि धर्म का त्याग करने से व्यक्ति सब कुछ खो देता है। संत शिरोमणि गुरु रविदास के ये विचार हिंदू धर्म में उनकी अटूट आस्था के प्रतीक हैं। मध्यकाल में "स्वतंत्रता" के संबंध में उनके विचार उल्लेखनीय हैं। उनके अनुसार, पराधीन व्यक्ति मानव होने की गरिमा खो देता है। इसलिए उन्होंने "पराधीनता" को पाप कहा। चाहे वह विदेशी शासन के अधीन औपनिवेशिक पराधीनता हो, भौतिक इच्छाओं के प्रति आत्म-लिप्त पराधीनता हो, या सामंती संस्कृति द्वारा थोपी गई पराधीनता हो, रविदास इन सभी के विरुद्ध संघर्ष के मार्ग सुझाते हैं। "पराधीनता पाप है, जान ले मेरे मित्र। रविदास कहते हैं, पराधीन से कौन प्रेम कर सकता है? पराधीन व्यक्ति का क्या सम्मान है? पराधीन व्यक्ति सम्मान से वंचित होता है। रविदास कहते हैं, सभी लोग पराधीन को निम्न समझते हैं।" इस पराधीनता से मुक्ति का मार्ग श्रम और कार्य की गरिमा है। इसलिए रविदास ने श्रम आधारित आर्थिक स्वतंत्रता पर बल दिया। उन्होंने एक ओर श्रम को "अपने कार्य" से जोड़ा और दूसरी ओर ईश्वर से। रविदास, मेरे अपने हाथ हैं और मेरे पास हजारों साधन हैं। मेरे श्रम से अर्जित कार्य ही मेरा धर्म है; यही मुझे संसार से पार लगाएगा। मेरी जिह्वा से मैं ओंकार का जाप करता हूं, और अपने हाथों से कार्य करता हूँ। ईश्वर मेरे घर मुझसे मिलने आते हैं, रविदास कहते हैं। जिसे तुम दिन-

IARJSET ISSN (O) 2393-8021, ISSN (P) 2394-1588

International Advanced Research Journal in Science, Engineering and Technology
Impact Factor 8.066 ⁙ Peer-reviewed & Refereed journal ⁙ Vol. 13, Issue 7, July 2026
DOI: 10.17148/IARJSET.2026.13725

रात पूजते हो उसे ईश्वर मानो, और सभी को सम्मान से देखो। रविदास कहते हैं, ऐसे लोगों के बीच इस संसार में सदैव सुख और आनंद रहता है। रविदास के इस भजन के पीछे गहरी सांस्कृतिक चेतना निहित है, और वे पारंपरिक कर्मकांडीय पूजा के प्रभुत्व के समानांतर मुक्ति-उन्मुख भक्ति का एक वैकल्पिक रूप प्रस्तुत करना चाहते थे। यह भजन गरीब और असहाय वर्गों की विचारधारा को व्यक्त करता है, जहां बिना कर्मकांडों के भी ईश्वर का आह्वान किया जा सकता है। सामाजिक असमानता को दूर करने से पहले ऐसा प्रतीत होता है कि रविदास सांस्कृतिक असमानता को संबोधित करना और अपरिवर्तनीय कठोर समाज की सांस्कृतिक चेतना को जागृत करना चाहते थे। यद्यपि इस कथन की ऐतिहासिकता संदिग्ध हो सकती है, लेकिन इसकी प्रासंगिकता निश्चित रूप से यह है कि मीरा के माध्यम से रविदास ने पूजा की पारंपरिक छवि को तोड़ा और इसे सामान्य लोगों के लिए सुलभ बनाया। पूजा की भाषा में पारंपरिक पूजा का यह अस्वीकार रविदास को प्रगतिशील मूल्यों का समर्थक बनाता है। शुकदेव सिंह द्वारा संपादित "रविदास बानी" के 193 पदों में "आरती" शब्द 8 पदों में लोकतांत्रिक रूप से आता है और सबसे अधिक बार प्रयुक्त शब्द है। भोजन से पहले वे "ईश्वर" को सामान्य लोगों के लिए सुलभ बनाना चाहते थे, क्योंकि पराधीन जीवन जीने वाले सामान्य मनुष्यों के लिए यह "ईश्वर" सबसे महत्वपूर्ण तत्व है। जहां भी "राम का नाम" प्राप्त होता है, वहां आचरण भी सरल हो जाता है, अर्थात वह समानता के क्षेत्र में होता है। जहां ऐसा नहीं होता, वहां मनुष्य समानता और बंधुत्व की जड़ों से वंचित हो जाते हैं। जहां अपने और पराए का भेद होता है, वहां मनुष्य अपनी वास्तविकता से वंचित हो जाता है। वे स्वयं कहते हैं। "ऐसी हमारी भक्ति है, हे संतों, जो वास्तव में महान है। तुम अपने और पराए को नहीं समझते, इसलिए अपना सार खो देते हो।" रविदास का यह दुख आधुनिक लोकतांत्रिक सपनों के वास्तविकता न बन पाने का दुख है, और इसलिए वे आज उन चौराहों पर पड़े लोगों के बीच अधिक पूजनीय हैं जिन्होंने संघर्षों के माध्यम से रविदास के इन मध्यकालीन सपनों को वास्तविकता बनते देखा है। इसी माध्यम से रविदास आज भी लोगों के बीच उपस्थित हैं। वास्तव में, यहाँ "सार" का अर्थ ईश्वर की प्राप्ति नहीं, बल्कि प्रत्येक मनुष्य के भीतर ईश्वर की दिव्य लीला के विस्तार को देखना है। जहां ऐसा नहीं होता, वहाँ रविदास स्वयं अत्यंत दुखी हो जाते हैं, और यह बिना कारण नहीं है कि उनके अनेक पदों में मैं दुखी रहता हूँ जैसी भावनाएं दिखाई देती हैं। जहां प्रेममय भक्ति का अभाव होता है और कर्मकांड तथा योग का प्रभुत्व होता है, वहां रविदास स्वयं दुखी हो जाते हैं। उन्होंने बार-बार कहा कि वे केवल उसी एक की पूजा करते हैं जिसका कोई दूसरा स्थान नहीं है, अर्थात जो सभी का है। "रविदास, मैं केवल उसी एक की पूजा करता हूँ। जिसका स्थान और नाम कोई नहीं जानता।" यह एक प्रकार से निराकार ईश्वर की ओर संकेत करता है, क्योंकि जहां साकार रूप होता है, वहाँ "तुम्हारा और मेरा" का भाव बना रहता है, जिसके कारण मनुष्य ईश्वर के मूल स्वरूप से वंचित हो जाते हैं। "मैं योग, यज्ञ या गुणों को नहीं जानता; इसलिए मैं दुखी रहता हूँ" अर्थात, यह योग, कर्मकांडीय यज्ञ और सगुण ईश्वर के प्रति गहरा अविश्वास है। रविदास का दर्शन आधुनिक मौलिक चिंतकों के लिए एक प्रकार की चुनौती है। इसी पद में वे कहते हैं "मैं अपना सार खो देता हूं," जिसका अर्थ है कि अहंकार का प्रभुत्वकृस्वयं को श्रेष्ठ समझना और दूसरों को स्वीकार न करना, सच्चे ईश्वर को समझने में सबसे बड़ी बाधा है।

IARJSET ISSN (O) 2393-8021, ISSN (P) 2394-1588

International Advanced Research Journal in Science, Engineering and Technology
Impact Factor 8.066 ⁑ Peer-reviewed & Refereed journal ⁑ Vol. 13, Issue 7, July 2026
DOI: 10.17148/IARJSET.2026.13725

निष्कर्ष

रविदास ने अपना पूरा जीवन इस बाधा को दूर करने में लगाया क्योंकि उनका मुख्य उद्देश्य धार्मिक सत्ता के आंतरिक विरोधाभासों को उजागर करना था। आधुनिक ज्ञान विश्लेषण के दृष्टिकोण से यह अत्यंत प्रासंगिक और क्रांतिकारी पहलू है। यह सार की ओर संकेत करता है। ईश्वर पर नियंत्रण इसी अहंकार का परिणाम है। जब यह अहंकार समाप्त हो जाता है, तो ईश्वर सभी के लिए समान हो जाता है। इसका अर्थ यह भी है कि रविदास के अनुसार सगुण रूप की उपस्थिति स्वयं अहंकार की एक प्रकार की उपस्थिति है, क्योंकि जो सगुण रूप को स्वीकार करता है, वह दूसरे के अस्तित्व को मान्यता देता है और स्वयं के भीतर ईश्वर की उपस्थिति को नकार देता है। यह भी कहा गया है। तुम अपने और पराए को नहीं समझते, इसलिए अपना सार खो देते हो। नाम के महत्व को स्थापित करने और सभी के लिए ईश्वर की पूजा के द्वार खोलने के उद्देश्य से रविदास ने मध्यकाल में अपनी उपस्थिति स्थापित की। सामान्य लोगों के इन संबंधों को समझने की प्रक्रिया में वे जनसमूह के बीच समाहित हो गए, और फिर, जैसा अक्सर होता है, लोगों ने उन्हें चमत्कारी व्यक्तित्व के रूप में देखना शुरू कर दिया और उनकी महानता के बारे में विभिन्न कथाएं बना लीं। इन कथाओं में न केवल उनका ऐतिहासिक महत्व है, बल्कि एक वैकल्पिक बौद्धिक सृजन की चेतना भी है, और बाद में जिन लोगों ने इस चेतना को आगे बढ़ाया, वे रविदास के अनुयायी बने।

सन्दर्भ

[1]. शर्मा, डॉ. शिवकुमार, हिन्दी साहित्य युग और प्रवृत्तियाँ, अशोक प्रकाशन, दिल्ली, 2000, पृ. 161

[2]. शर्मा, विनय मोहन, महाराष्ट के प्रिय संत और उनकी हिन्दी वाणी, संपादक, विश्वविद्यालय प्रकाशन, वाराणसी, 1981, पृ. 25

[3]. शर्मा, विनय मोहन, महाराष्ट के प्रिय संत और उनकी हिन्दी वाणी, संपादक, विश्वविद्यालय प्रकाशन, वाराणसी, 1981, पृ. 7

[4]. शर्मा, डॉ शिवकुमार, हिन्दी साहित्य युग और प्रवृत्तियाँ, अशोक प्रकाशन, नई सड़क दिल्ली, 2000, पृ. 165

[5]. शर्मा, विनय मोहन, महाराष्ट्र के प्रिय संत और उनकी हिन्दी वाणी, संपा. विश्वविद्यालय प्रकाशन, वाराणसी, 1981, पृ. 5

[6]. चतुर्वेदी, परशुराम, दादू दयाल,ग्रन्थावली,ना.प्र.सभा, वाराणसी,संवत् 2023, अंक 33, पृ.16

[7]. चतुर्वेदी, परशुराम, दादू दयाल ग्रन्थावली,ना.प्र.सभा,वाराणसी,संवत् 2023, अंक 33, पृ. 17

[8]. चतुर्वेदी, परशुराम, दादू दयाल ग्रन्थावली,संवत्,ना.प्र.सभा,वाराणसी, 2023, अंक 33, पृ. 23

© IARJSET This work is licensed under a Creative Commons Attribution 4.0 International License